

## Israel: Formalising a warm partnership

### ET Editorials



Prime Minister Narendra Modi's visit to Israel, the first by an Indian head of government, and his Israeli counterpart's warm reception mark a milestone. The partnerships and agreements that have been finalised are important but what makes this visit historic is the formal dehyphenation of Israel and Palestine in India's foreign policy. Allowing for the development of India's open partnership in West Asia, it is not a question of choosing one side over another, but of putting in place relationships that are independent, strategic and mutually beneficial. The visit sends out a political signal to business to step up partnership, trade and investment.

It is no surprise that innovation, water, agriculture and terror dominated discussions. Israel is a leader in conservation and efficiency of water use, and improved agricultural productivity. These are crucial areas for India, and priorities for the government given its goal of doubling farmer incomes by 2022. The growing pressures on water exacerbated by climate change and rising demand make this an important sector. The \$40-million bilateral technology innovation fund in industrial development will help augment R&D and create a framework for partnership by Indian and Israeli researchers. The lacunae in India's cyber defences should be a priority area of joint research.

Terror is the other big-ticket issue. Mindful of India's relationship with countries in West Asia and the Gulf region, the joint statement does not specify any particular source of threat to peace and stability. Instead, it stresses on cooperating to combat growing radicalisation and terrorism, including cyber threats. The joint statement stresses on reliance on dialogue and restraint. This visit does not signal India picking sides in the Israel-Palestine conflict. India remains committed to a resolution that is democratic and that ensures the rights of the Palestinians and Israelis are protected. In engaging with Palestine and Israel as separate entities, New Delhi has created the space to play honest broker should it choose to do so.

---

# बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 06-07-17

## सहयोग संभावनाएं

### संपादकीय

भारत और इजरायल के बीच कूटनयिक संबंध 1992 में स्थापित हुए। उसके बाद से दोनों देश निरंतर बहुआयामी साझेदारी का हिस्सा बने हैं। नरेंद्र मोदी पहले भारतीय प्रधानमंत्री हैं जो इजरायल की यात्रा पर गए हैं। इजरायल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू के साथ उनकी मुलाकात के बाद यह माना जा सकता है कि वृहद आर्थिक प्रबंधन, व्यापारिक उदारीकरण, पर्यावरण संरक्षण और निवेश के मोर्चे पर दोनों देशों के बीच आपसी सहयोग और अधिक गहरा होगा। यह मुलाकात द्विपक्षीय कारोबार और निवेश को भी बढ़ावा देगी जो अन्यथा ठहरा रहा है। उदाहरण के लिए दोनों देशों के बीच रक्षा संबंधों में विस्तार की पूरी गुंजाइश है। तथ्य यह है कि भारत दुनिया में रक्षा उपकरणों के सबसे बड़े आयातकों में से एक है और इजरायल दुनिया के सबसे बड़े चार निर्यातकों में शामिल है। इससे यह संकेत साफ है कि यह गठजोड़ भविष्य में और अधिक मजबूत हो सकता है। दोनों देशों के बीच रक्षा और आतंकवाद उन्मूलन कार्रवाई के लिए ड्रोन और अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी में सहयोग की मदद से आपसी रिश्तों को और मजबूत किया जा सकता है। लेकिन राजनयिक और सामरिक रिश्तों से इतर मोदी की तीन दिवसीय इजरायल यात्रा और अधिक फलदायी हो सकती है, बशर्ते कि यह खेती और जल प्रबंधन तकनीक जैसे क्षेत्रों में भी द्विपक्षीय सहयोग पर ध्यान दे। ये वे क्षेत्र हैं जहां इजरायल को भारी बढ़त हासिल है। पानी का किफायती इस्तेमाल और खारे और खराब पानी का पुनर्चक्रण वह क्षेत्र है जिसमें दोनों देश साझा सहयोग कर सकते हैं। करीब सात दशक पहले जब इजरायल का गठन हुआ तब वहां पानी की भारी कमी थी। उसके भूभाग का 60 फीसदी हिस्सा रेतीला था और बाकी हिस्सा एकदम शुष्क। बारिश में भी लगातार कमी आ रही थी।

इसके बावजूद इजरायल ने न केवल अपनी बढ़ती आबादी के लिए जरूरत का पानी जुटाया बल्कि अपने पड़ोसी मुल्कों को पानी का निर्यात करना भी शुरू किया। इजरायल ने खारे समुद्री जल को मीठा बनाया। अब उसकी कुल खपत में एक तिहाई पानी ऐसा ही है। उसने ऐसी तकनीक विकसित की है जिसकी मदद से हवा से पानी खींचकर उसे ऐसे स्थानों पर ले जाया जाता है जहां ताजे पानी की कमी है। भारत में ऐसी अनेक जगह हैं और ये तकनीक भारतीयों की पेय जल संबंधी जरूरतों को पूरा कर सकती हैं। इसी तरह जब प्रधानमंत्री ने भारतीय कृषिविदों को कम पानी और अधिक फसल का नारा दिया तो यह बात जानना जरूरी है कि इजरायल ने कम से कम कीटनाशकों, उर्वरकों आदि के इस्तेमाल से अधिक से अधिक फसल उगाने में विशेषज्ञता हासिल की है। इजरायल की विशेषज्ञता की मदद से भारत कृषि उत्पादकता में जबरदस्त इजाफा कर सकता है। भारत-इजरायल कृषि परियोजना पहले से ही चल रही है। उसमें ऐसी कृषि तकनीकों का प्रदर्शन किया गया है। बहरहाल, इसका प्रभाव मोटे तौर पर छोटी जगहों तक सीमित है क्योंकि इन प्रौद्योगिकी में भारी पूंजी की आवश्यकता होती है। इसकी एक वजह यह भी है कि भारतीय कृषि प्रसार एजेंसियां किसानों तक इसका ज्ञान सही ढंग से पहुंचा नहीं पातीं। इसके अतिरिक्त कई छोटे और सीमांत किसान, जिनको ऐसी तकनीक की सबसे अधिक आवश्यकता है, वे इन्हें नहीं आजमा पाते हैं क्योंकि इनमें शुरुआती निवेश बहुत ज्यादा है। भारतीय कृषि शोध संस्थान ड्रिप सिंचाई और अन्य सूक्ष्म सिंचाई व्यवस्थाओं को सस्ता बनाने पर काम कर रहे हैं ताकि वे किसानों को सहज उपलब्ध हों। माना जा रहा है कि प्रधानमंत्री की यह यात्रा संयुक्त भारत इजरायल प्रयास का सबब बनेगी और यह रिश्ता देश के किसानों को बेहतर तकनीकी सहयोग दिलाएगा। जिसकी कमी फिलहाल उनको खल रही है।



# दैनिक भास्कर

Date: 06-07-17

## चीनी विस्तारवाद के खिलाफ राजनयिक सक्रियता जरूरी

### संपादकीय



चीन विस्तारवादी तथा वर्चस्ववादी राष्ट्र है और उसके इसी चरित्र के कारण सिक्किम सेक्टर के डोकलाम में भारत और उसके बीच संघर्ष की स्थिति पैदा हुई है। भारतीय सेना ने भूटान और सिक्किम सीमा के त्रिकोण पर चीन के सड़क निर्माण को तकरीबन 20 दिन से रोक रखा है। तभी से चीनी सेना और राजनयिक फनफना रहे हैं। भारतीय रक्षामंत्री उसका जवाब दे चुके हैं पर मामला ठंडा होने का नाम नहीं ले रहा है। हालांकि भारतीय सेना ने चीन के सड़क निर्माण को रोकने के लिए बल प्रयोग करने की बजाय मानव शृंखला बनाई है फिर भी चीनी विशेषज्ञ इसे युद्ध की स्थिति बता रहे हैं। सबसे तीखा बयान भारत स्थित चीनी राजदूत का है, जिसने कहा है कि अब गेंद भारत

के पाले में है।

चीन के एक अन्य विशेषज्ञ ने धमकाते हुए सैन्य कार्रवाई की चेतावनी दे डाली है। ये स्थितियां चीन के चरित्र को स्पष्ट तो करती ही हैं लेकिन, भारत की राजनयिक नाकामी को भी बताती हैं। उसे इस मोर्चे पर जितनी राजनयिक सक्रियता की जरूरत है उतनी वह दिखा नहीं पा रहा है। नरेंद्र मोदी के प्रधानमंत्री बनने के बाद निश्चित तौर पर भारतीय राजनय पूरी दुनिया में दिखाई पड़ रहा है। मोदी का पहले यूरोप, फिर अमेरिका और इजरायल दौरा होने के साथ भारत, जापान और अमेरिकी सेना का ताजा मालाबार सैन्य अभ्यास उसी शृंखला की कड़ियां हैं। यह प्रयास भारत की ताकत बढ़ाने और चीन को रोकने के लिए भी है लेकिन, असर उल्टा हो रहा है। चीन चिढ़ा हुआ है कि भारत उसकी बजाय अमेरिका की ओर जा रहा है और दलाई लामा ने अरुणाचल प्रदेश का दौरा किया, जिसे वह अपना प्रदेश बताता है। हालांकि दुनिया को एक व्यापार और देशों को बाजार समझने वाले नीतिकार आश्वस्त हैं कि युद्ध करना तो चीन के हित में है और ही भारत के और वह होने वाला है। पर उदारीकरण के तकरीबन 27 साल के रिकॉर्ड बताते हैं कि राष्ट्रों ने सेनाओं का प्रयोग बंद नहीं किया है। इसलिए अगर शंघाई सहयोग संगठन और ब्रिक्स के सहारे भारत चीन के बीच आर्थिक क्रियाकलाप बढ़ने के साथ सीमा विवाद घटने और हल होने की उम्मीदें हैं तो 1962 और 1967 की कड़वी स्मृतियों के दोहराए जाने के खतरे भी हैं। स्पष्ट तौर पर मौजूदा समस्या का समाधान तो युद्ध में है और ही लगातार राष्ट्रीय संप्रभुता का ध्वज ऊंचा उठाते जाने में। समाधान चीन से व्यापार और राजनयिक संवाद बढ़ाने में ही है।



## गुरुदेव गुप्त

### दोस्ती का नया दौर

भारतीय प्रधानमंत्री की तीन दिवसीय इजरायल यात्रा दोनों देशों के रिश्तों में मजबूती के साथ ही भारत की विदेश नीति में एक बड़े बदलाव का सूचक भी है। इजरायल से कूटनीतिक संबंध कायम होने के 25 साल बाद पहले भारतीय प्रधानमंत्री के तौर पर नरेंद्र मोदी ने इस देश पहुंचकर यह स्पष्ट किया कि भारत अंतरराष्ट्रीय कूटनीति के पुराने तौर-तरीकों से बंधे रहने के लिए तैयार नहीं। बीते 25 सालों में किसी भारतीय प्रधानमंत्री ने इजरायल जाने में हिचक दिखाई तो इसीलिए कि कहीं अरब देश विपरीत प्रतिक्रिया व्यक्त न करें और देश का मुस्लिम समाज यह न सोचने लगे कि फलस्तीन के प्रति जताई गई प्रतिबद्धता से पीछे हटा जा रहा है। मुस्लिम तुष्टीकरण की राजनीति ने इस हिचक को और बढ़ाने का काम किया। इस हिचक को आज से 25 साल पहले एक बड़ी हद तक तोड़ा तत्कालीन प्रधानमंत्री नरसिंह राव ने। आज जब भारत और इजरायल बेहतर समझबूझ वाले मित्र देश के तौर पर देखे जा रहे हैं तो इसके लिए नरसिंह राव की दूरदर्शिता को सराहा जाना चाहिए। इजरायल से दोस्ती के मामले में इसकी भी अनदेखी नहीं की जा सकती कि वक्त के साथ कई अरब देशों का उसके प्रति नजरिया बदला है। कुछ अरब

**भारत और इजरायल के बीच मैत्रीपूर्ण संबंधों का एक आधार यह भी है कि किसी न किसी स्तर पर दोनों देश के लोग खुद को सामाजिक-सांस्कृतिक तौर पर एक जैसी भावभूमि में पाते हैं।**

देशों ने तो इजरायल से कूटनीतिक संबंध भी कायम कर लिए हैं। इन स्थितियों में यह सहज-स्वाभाविक था कि भारतीय नेतृत्व इजरायल का हाथ थामने को लेकर संकोच का परित्याग करता। इसलिए और भी कि एक समय फलस्तीन लिबरेशन ऑर्गनाइजेशन के नेता यासिर अराफात ने खुद इसकी पैरवी की थी कि भारत को इजरायल तक अपनी पहुंच बढ़ानी चाहिए। यह समझना कठिन है कि मोदी सरकार के पहले तक भारतीय नेतृत्व इस आधारहीन सोच से क्यों ग्रस्त रहा कि फलस्तीन से दोस्ती इजरायल से दूरी के रूप में दिखनी चाहिए? इस सोच का इसलिए कहीं कोई मतलब नहीं था, क्योंकि इजरायल ने हर मुश्किल वक्त में भारत का साथ दिया। सच तो यह है कि उसने हमारा साथ उस दौर में भी दिया जब उससे कूटनीतिक संबंध कायम नहीं हुए थे, फिर भी हमारा तत्कालीन नेतृत्व उसके प्रति दूरी बनाए रहा। क्या यह बेहतर नहीं होता कि इजरायल से कूटनीतिक संबंध कायम होने और कारगिल संघर्ष के दौरान उसकी भरपूर मदद के बाद ही भारत उसे अपने स्वाभाविक सहयोगी के तौर पर रेखांकित करता? भारत और इजरायल महज इसलिए स्वाभाविक सहयोगी नहीं हैं, क्योंकि सुरक्षा के मोर्चे पर एक जैसी स्थितियों से दो-चार हैं। भारत और इजरायल के बीच मैत्रीपूर्ण संबंधों का एक आधार यह भी है कि किसी न किसी स्तर पर दोनों देश के लोग खुद को सामाजिक-सांस्कृतिक तौर पर एक जैसी भावभूमि में पाते हैं। इस भावभूमि को इजरायल मूल के उन तमाम लोगों ने मजबूती दी जो इस देश के गठन के पहले से भारत में आ बसे थे। इजरायली नेताओं ने भारतीय प्रधानमंत्री का जैसा स्वागत-सत्कार किया वह भारत के बढ़ते कद का भी परिचायक है। यह लगभग तय है कि इजरायल से जल प्रबंधन, खेती, रक्षा-सुरक्षा के साथ-साथ तकनीक के मामले में भी मदद मिलेगी और दोनों देशों की दोस्ती एक नया इतिहास रचती दिखेगी।

*Date: 05-07-17*

## In Defence of Esoterica

*Lack of high-end research has a cascading effect. It impacts people's earning abilities*

**M. Rajivlochan** The writer is member, State Higher Education Council, Chandigarh and director, Internal Quality Assurance Cell, Panjab University



Indians in India do not do high-end research. That is well-known. What is less well-known is that they do not do much low-end research either. This seems to have an anti-learning cascading effect lower down, and a disastrous impact on earning abilities. To add to this, in June, a division bench of the Bombay High Court suggested that the school boards examine the possibility of making Mathematics an optional subject for the Class X examination. Apparently, the Court found that 90 per cent of those who dropped out of school did so because of Mathematics and English which, in their view, was unfair if the student needed to study Arts subjects for which there was, the judges suggested, no need to know Mathematics.

If that happens, we can effectively bid goodbye to being a society committed to whatever little higher order learning that is happening in India. Could it be that in the absence of high-end research, not much exciting investigation seems to be happening at the lower-end of the research spectrum? And are we, as a society, giving up on formal learning in the misguided belief that if such learning is not insightful or exciting then why waste time on it? Data does suggest that this might be the case. The All India Survey of Higher Education says that in 2016, about 17 per cent of those who graduated from India's colleges took a BSc degree, 15 per cent went in for an engineering degree, 11 per cent studied commerce, 3 per cent passed out with a medical degree and about 1 per cent studied law. Some 3.9 million graduates, half of the total number, preferred a BA degree. Whether this large mass of Indian BAs are making Indians better human beings is not yet known. What is known is that it is not enabling them to be wealth creators.

What we also know is that young Indians do not seem to be particularly excited about taking the technical kind of education that primarily creates wealth. Surely, such people end up as part of the workforce. On that count too there are many surprises. The 66th round of survey by NSSO, found that only 2 per cent of the Indian labour force had any formal technical education. Common sense suggests that they might have learnt something on the job, some of them might have acquired skills simply by working under an ustad or there might have been hereditary skills imparted by the much-touted caste system in which children take up the profession of their fathers. Statistics also show that about 5 per cent of the workers have acquired skills commensurate with their work through informal sources or through self-learning. Only about 7 per cent workers had exposure to any work-related education, whether formal or non-formal. Such absence of knowledge and skills may or may not result in

potentially harmful workmanship. But at the level of the worker, it certainly lowers earning ability. Those with a diploma or certificate, the NSSO survey suggested, earned considerably more as compared to their uneducated and unskilled co-workers. In agriculture, the skilled worker earned 31 per cent more than his/her peers. In trade, the increment was 36 per cent, it was 64 per cent in mining and quarrying, 80-95 per cent in manufacturing and in the construction sector a more knowledgeable worker ended up earning twice as much. The earnings of those without any formal learning were so low as to put them close to the official poverty level in the country. Could it be that to boost Indians' interest in formal learning, the high-end researchers need to ramp up their efforts, work on exciting problems, create electrifying results, demonstrate the importance of their conclusions, enthuse people towards formal learning?

---